काम, आराम और जीवन

समकालीन विश्व में शहर

सन् 1880 में दुर्गाचरण राय ने एक उपन्यास लिखा था *देबगानेर मर्त्ये आगमन* (*धरती पर देवता उतरे*)। इस उपन्यास में ब्रह्मा कुछ अन्य देवताओं के साथ कलकत्ता जाने के लिए एक रेलगाड़ी में बैठते हैं। कलकत्ता उस समय के ब्रिटिश भारत की राजधानी था। वर्षा देव वरुण इन देवताओं को कलकत्ता की सैर कराते हैं। इस विशाल, आधुनिक शहर को देखकर सारे देवता चकित रह जाते हैं। वे न केवल रेलगाड़ी बल्कि गंगा के पानी में चलते विशाल जहाज़, कारखानों की धुआँ उगलती चिमनियों, बड़े-बड़े पुल, विशाल स्मारक और नाना प्रकार की चीजों से लदी दुकानों को देखकर विस्मित रह जाते हैं। जगमगाते महानगर की चकाचौंध से वे इतने अभिभूत हो जाते हैं कि स्वर्ग के अपने दरबार में भी ऐसा ही संग्रहालय बनाने का निर्णय कर लेते हैं!

उन्नीसवीं सदी के कलकत्ता में नए-नए मौक़ों की भरमार थी। वहाँ व्यापार और वाणिज्य, शिक्षा और नौकरियों के एक से एक अवसर सामने आ रहे थे। लेकिन देवतागण इस शहर की एक चीज़ से परेशान भी होते हैं। उन्हें यहाँ के ठग और चोरों, भयानक ग़रीबी, असंख्य लोगों के दड़बेनुमा मकानों को देखकर बड़ा दुख होता है। ब्रह्मा खुद ऐनक खरीदने के चक्कर में ठगे जाते हैं। जब वे जूते खरीदने के लिए दुकान में जाते हैं तो यह देखकर बड़े हैरान होते हैं कि सारे दुकानदार एक-दूसरे को धोखेबाज़ बता रहे हैं। सारे देवता जाति, धर्म और औरत-मर्द के फ़र्क़ को देखकर बड़े परेशान होते हैं। जो भेद अब तक क़ुदरती और सामान्य दिखाई देते थे वे टूटते दिखाई दे रहे थे।

दुर्गाचरण राय की तरह उन्नीसवीं सदी में भारत के बहुत सारे लोग शहरों को देखकर हैरान भी होते थे और भ्रम में भी पड़ जाते थे। शहर का जीवन परस्पर विरोधी छवियों और अनुभवों को जन्म दे रहा था : एक तरफ़ संपन्नता तो दूसरी ओर ग़रीबी का महासागर था, एक तरफ़ चमक-दमक थी तो दूसरी ओर धूल-धक्कड़ थी, एक ओर अवसर थे तो दूसरी ओर निराशा थी।

क्या शहर हमेशा ऐसे ही थे? यद्यपि शहरीकरण की प्रक्रिया बहुत लंबी रही है लेकिन आधुनिक शहर के उदय का इतिहास 200 साल से ज़्यादा पुराना नहीं है। औद्योगिक पूँजीवाद का उदय, दुनिया के बहुत बड़े भाग पर औपनिवेशिक शासन की स्थापना और लोकतांत्रिक आदर्शों का विकास, इन तीन ऐतिहासिक प्रक्रियाओं ने आधुनिक शहरों की शक्ल-सूरत तय करने में निर्णायक भूमिका निभायी है। इस अध्याय में शहरीकरण को जन्म देने वाली कुछ प्रक्रियाओं को समझने का प्रयास किया जाएगा। यहाँ हम इस बात की पड़ताल करेंगे कि आधुनिक शहर कैसे विकसित हुआ और शहर के भीतर क्या चलता है।

© NCERT not to be republished

1 शहर की विशेषताएँ

आइए, सबसे पहले इस बात पर विचार करें कि एक तरफ़ शहरों और दूसरी ओर गाँवों व क़स्बों के बीच हम क्या फ़र्क़ देखते हैं? उर, निप्पुर और मोहनजोदड़ो जैसे शुरुआती क़स्बे और शहर नदी घाटियों के आसपास विकसित हुए और वे अपने समय की अन्य इनसानी बस्तियों या आबादियों से बड़े थे। प्राचीन शहर केवल तभी बस सकते थे जब बहुत सारे ऐसे लोगों के लिए भी भोजन का प्रबंध किया जा सके जो खाद्य उत्पादन के अलावा अन्य काम करते हैं। राजनीतिक सत्ता, प्रशासकीय नेटवर्क, व्यापार और उद्योग, धार्मिक संस्थानों और बौद्धिक गतिविधियों के केंद्र आमतौर पर शहर ही होते थे।

शहरी इलाक़े कई तरह के हो सकते हैं। कहीं समय-समय पर लगने वाले बाज़ार होते हैं तो कहीं स्थायी बाज़ार होते हैं, तो दूसरी ओर ऐसे छोटे क़स्बे भी होते हैं जो बाज़ार के साथ-साथ क़ानून, प्रशासन और धार्मिक गतिविधियों के केंद्र भी हैं। शहरों के आकार और जटिलता में भी बहुत फ़र्क़ होता है : राजनीतिक प्राधिकार का केंद्र प्रायः शहर ही होते हैं। वे दस्तकारों, व्यापारियों और धार्मिक अधिकारियों को भी प्रश्रय देते हैं। शहर घनी आबादी वाले आधुनिक क़िस्म के **महानगर** भी हो सकते हैं जहाँ से एक पूरे क्षेत्र के राजनीतिक व आर्थिक कामों को देखा जाता है और जिनकी आबादी बहुत बड़ी होती है।

इस अध्याय में हम आधुनिक विश्व में **शहरीकरण** के इतिहास को समझने का प्रयास करेंगे। महानगरीय विकास के उदाहरण के तौर पर हम दो आधुनिक शहरों-लंदन और बंबई-का विस्तार से अध्ययन करेंगे। लंदन दुनिया का सबसे बड़ा महानगर है और उन्नीसवीं सदी में साम्राज्यवादी केंद्र रहा है। बंबई भारतीय उपमहाद्वीप का सबसे महत्वपूर्ण आधुनिक शहर है।

गतिविधि

क्या आप भारतीय इतिहास में से इन श्रेणियों के सही उदाहरण ढूँढ़ सकते हैं–कोई धार्मिक केंद्र, एक बाज़ार, शहर, कोई क्षेत्रीय राजधानी, एक महानगर? उनमें से किसी एक के इतिहास के बारे में पता लगाएँ।

नए शब्द

महानगर : किसी प्रांत या देश का विशाल और घनी आबादी वाला शहर जो प्रायः वहाँ की राजधानी भी होता है।

शहरीकरण : किसी शहर या क़स्बे के रूप में विकसित होने की प्रक्रिया।

1.1 इंग्लैंड में औद्योगीकरण और आधुनिक शहर का उदय

आधुनिक काल में औद्योगीकरण ने शहरीकरण के स्वरूप पर गहरा असर डाला है। इसके बावजूद, 1850 के दशक तक भी, यानी औद्योगिक क्रांति की शुरुआत होने के कई दशक बाद तक भी ज़्यादातर पश्चिमी शहर मोटे तौर पर ग्रामीण क़िस्म के शहर ही थे। लीड्स और मैनचेस्टर जैसे प्रारंभिक औद्योगिक शहर अठारहवीं सदी के आखिर में स्थापित किए गए कपड़ा मिलों के कारण प्रवासी मज़दूरों को बड़ी संख्या में आकर्षित कर रहे थे। 1851 में मैनचेस्टर में रहने वाले तीन चौथाई से ज़्यादा लोग ग्रामीण इलाक़ों से आए प्रवासी मज़दूर थे।

आइए, अब ज़रा लंदन को देखें। 1750 तक इंग्लैंड और वेल्स का हर नौ में से एक आदमी लंदन में रहता था। यह एक महाकाय शहर था जिसकी आबादी 6,75,000 तक पहुँच चुकी थी। उन्नीसवीं शताब्दी में भी लंदन इसी तरह फैलता रहा। 1810 से 1880 के बीच सत्तर सालों में उसकी आबादी 10 लाख से बढ़कर 40 लाख यानी चार गुना हो चुकी थी।

© NCERT not to be republished

हालाँकि लंदन में विशाल कारखाने नहीं थे फिर भी प्रवासी आबादी चुंबक की तरह उसी की तरफ़ खिंची चली आती थी। गैरेथ स्टेडमैन जोन्स के शब्दों में, "उन्नीसवीं शताब्दी का लंदन क्लर्कों और दुकानदारों, छोटे पेशेवरों और निपुण कारीगरों, कुशल व शारीरिक श्रम करने वालों की बढ़ती आबादी, सिपाहियों, नौकरों, दिहाड़ी मज़दूरों, फेरीवालों और भिखारियों का शहर था।" लंदन की गोदी के अलावा मुख्य रूप से पाँच तरह के बड़े उद्योगों में बहुत सारे लोगों को काम मिला हुआ था। ये उद्योग थे : परिधान और जूता उद्योग, लकड़ी व फ़र्नीचर उद्योग, धातु एवं इंजीनियरिंग उद्योग, छपाई और स्टेशनरी उद्योग तथा शल्य चिकित्सा उपकरण व घड़ी जैसे सटीक माप वाले उत्पादों और क़ीमती धातुओं की चीज़ें बनाने वाले उद्योग। पहले विश्वयुद्ध (1914–18) के दौरान लंदन में मोटरकार और बिजली के उपकरणों का भी उत्पादन होने लगा और विशाल कारखानों की संख्या बढ़ते-बढ़ते इतनी हो गई कि शहर की तीन चौथाई नौकरियाँ इन्हीं कारखानों में सिमट गईं।

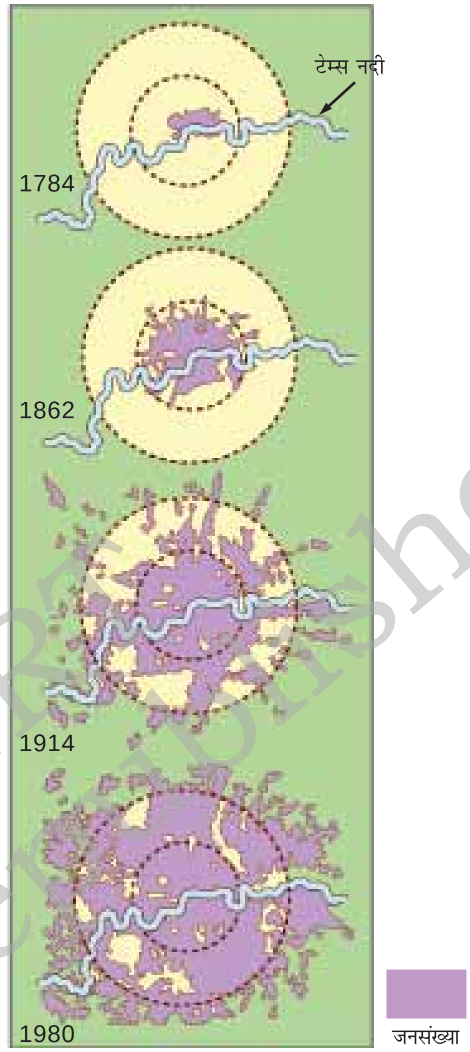

चित्र 1 – लंदन का फैलाव : चार अलग दौरों में लंदन की आबादी को दर्शाने वाला मानचित्र।

1.2 हाशिये के समूह

जैसे-जैसे लंदन बढ़ा, वहाँ अपराध भी बढ़ने लगे। कहते हैं कि 1870 के दशक में लंदन में कम से कम बीस हज़ार अपराधी रहते थे। इस दौर की आपराधिक गतिविधियों के बारे में अब हम काफ़ी कुछ जानते हैं क्योंकि उस समय अपराध व्यापक चिंता और बेचैनी का कारण बन चुके थे। पुलिस क़ानून व्यवस्था को लेकर चिंतित थी, **परोपकारी** समाज की नैतिकता को लेकर बेचैन थे, और उद्योगपति परिश्रमी व अनुशासित मज़दूर वर्ग चाहते थे। इन्हीं सारी बातों को ध्यान में रखते हुए अपराधियों की गिनती की गई, उनकी गतिविधियों पर नज़र रखी जाने लगी और उनकी ज़िंदगी के तौर-तरीकों की जाँच की जाती थी।

उन्नीसवीं सदी के मध्य में हेनरी मेह्यू ने लंदन के मज़दूरों पर कई किताबें लिखीं। उन्होंने ऐसे लोगों की एक लंबी सूची भी बनाई जो अपराधों से ही अपनी आजीविका चलाते थे। 'अपराधियों' की इस सूची में दर्ज बहुत सारे ऐसे लोग भी थे जो मकानों की छतों से सीसा चुरा लेते थे, दुकानों से खाने की चीज़ें उठा लेते थे, कोयले के ढेर उठा ले जाते थे या बाड़ों पर सूखे कपड़े उठा ले जाते थे। दूसरी ओर ऐसे अपराधी भी थे जो अपने धंधे में माहिर थे, जिन्हें अपराधों को पूरी सफ़ाई से अंजाम देना अच्छी तरह आता था। लंदन की सड़कों पर ठगों और जालसाज़ों, जेबकतरों और छोटे-मोटे चोरों की भरमार रहती थी। जनता को अनुशासित करने के लिए शासन ने अपराधों के लिए भारी सज़ाएँ तय कर दीं और जो 'लायक ग़रीब' थे उन्हें रोज़गार देने का इंतज़ाम शुरू किया।

अठारहवीं सदी के आखिर में और उन्नीसवीं सदी के शुरुआती दशकों में फ़ैक्ट्रियों में बहुत सारी औरतें भी काम करती थीं। जैसे-जैसे तकनीक में सुधार आया, कारखानों में औरतों की नौकरियाँ छिनने लगीं और वे घरेलू कामों में सिमट कर रह गईं। 1861 की जनगणना से पता चला कि लंदन में लगभग ढाई लाख घरेलू नौकर हैं। उनमें औरतों की संख्या बहुत ज़्यादा थी। उनमें से अधिकांश हाल ही में शहर में आई थीं। बहुत सारी औरतें परिवार की आय बढ़ाने के लिए अपने मकानों का भी इस्तेमाल करती थीं। वे या तो किसी को

नए शब्द

परोपकारी : ऐसा व्यक्ति जो सामाजिक उत्थान और भलाई के लिए काम करता है और इसके लिए अपना पैसा व समय देता है।

© NCERT not to be republished

भाड़े पर रख लेती थीं या घर पर ही रह कर सिलाई-बुनाई, कपड़े धोने या माचिस बनाने जैसे काम करती थीं। बीसवीं सदी में हालात एक बार फिर बदले। जब औरतों को युद्धकालीन उद्योगों और दफ़्तरों में काम मिलने लगा तो वे घरेलू काम छोड़ कर फिर बाहर आने लगीं।

बहुत सारे बच्चों को भी मामूली वेतन के लिए कामों पर भेजा जाने लगा। बहुधा उनके माँ-बाप ही उन्हें काम पर भेजते थे। 1880 के दशक में द *बिटर क्राई ऑफ़ आउटकास्ट लंदन* नामक पुस्तक लिखने वाले पादरी ऐंड्रयू मीयर्न्स ने इस बात पर रोशनी डाली कि लंदन के अल्पवेतन कारखानों में मज़दूरी करने की बजाय अपराध ही ज़्यादा फ़ायदेमंद क्यों हैं : 'माना जाता है कि सात साल का एक बच्चा चोरी-चकारी करके हर हफ़्ते आराम से 10 शिलिंग 6 पेंस कमा लेता है...। अगर इसी उम्र का कोई लड़का उस चोर के बराबर कमाना चाहे तो इसके लिए उसे हफ़्ते में माचिसों के 56 डिब्बे यानी रोज़ाना 1,296 माचिसें बनानी पड़ेंगी।' 1870 के अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा क़ानून और 1902 से लागू किए गए फ़ैक्ट्री क़ानून के बाद बच्चों को औद्योगिक कामों से बाहर रखने की व्यवस्था लागू कर दी गई।

गतिविधि

कल्पना कीजिए कि आप एक अखबार के संवाददाता हैं और आपको लंदन में 1811 में आ रहे बदलावों के बारे में लेख लिख कर भेजना है। आप किन समस्याओं के बारे में लिखेंगे? उस समय जो बदलाव आ रहे थे उनसे किसको फ़ायदा होना था?

1.3 आवास

औद्योगिक क्रांति के बाद लोग बड़ी संख्या में शहरों की तरफ़ रुख करने लगे तो लंदन जैसे पुराने शहर नाटकीय रूप से बदलने लगे। फ़ैक्ट्री या वर्कशॉप मालिक प्रवासी कामगारों को रहने की जगह नहीं देते थे। फलस्वरूप, जिनके पास ज़मीन थी ऐसे अन्य लोग ही इन नवागंतुकों के लिए सस्ते और सामान्यत: असुरक्षित **टेनेमेंट्स** बनाने लगे।

नए शब्द

टेनेमेंट्स : कामचलाऊ और अकसर बेहिसाब भीड़ वाले अपार्टमेंट मकान। ऐसे मकान बड़े शहरों के ग़रीब इलाक़ों में ज़्यादा पाए जाते थे।

चित्र 2 - ए स्ट्रेंजर्स होम (अजनबियों का घर), दि इलस्ट्रेड लंदन न्यूज़, 1870
बहुत सारे शहरों में खैराती संस्थाओं और स्थानीय शासन की ओर से जाड़ों में रैनबसेरे और अजनबी घरों की व्यवस्था की जाती थी। ग़रीब लोग भोजन, गर्माहट और पनाह की आस में इन स्थानों की ओर टूट पड़ते थे।

© NCERT not to be republished

यूँ तो गाँवों में भी ग़रीबी खूब थी लेकिन शहरों में तो बहुत घनी और साफ़ दिखाई पड़ती थी। 1887 में लिवरपूल के एक जलपोत मालिक चार्ल्स बूथ ने लंदन के ईस्ट एंड (पूर्वी छोर) में लंदन के अल्पकुशल मज़दूरों का पहला सामाजिक सर्वेक्षण किया। उन्होंने पाया कि लंदन के कम से कम 10 लाख (लंदन की आबादी का लगभग पाँचवाँ हिस्सा) लोग बहुत ही ग़रीब हैं और उनकी औसत उम्र 29 साल से ज़्यादा नहीं है (संपन्न वर्ग और मध्यवर्ग की औसत उम्र 55 साल थी)। बूथ ने पाया कि इन मज़दूरों के किसी 'वर्कशॉप, अस्पताल या पागलखाने' में मरने की संभावना ज़्यादा है। चार्ल्स बूथ ने अपने सर्वेक्षण में निष्कर्ष निकाला कि लंदन को 'अपने निर्धनतम नागरिकों को बसाने के लिए कम से कम 4,00,000 कमरे और बनाने होंगे।

कुछ समय तक शहर के खाते-पीते बाशिंदे यही माँग करते रहे कि झोपड़पट्टियों को साफ़ कर दिया जाना चाहिए। लेकिन धीरे-धीरे लोग इस बात को समझने लगे कि शहर के ग़रीबों के लिए भी आवास का इंतज़ाम करना ज़रूरी है। इस बढ़ती चिंता के क्या कारण थे? पहली बात तो यही थी कि ग़रीबों के एक कमरे वाले मकानों को जनता के स्वास्थ्य के लिए खतरा माना जाने लगा था। इन मकानों में भीड़ रहती थी, वहाँ हवा-निकासी का इंतज़ाम नहीं था और साफ़-सफ़ाई की सुविधाएँ नहीं थीं। दूसरा, खस्ताहाल मकानों के कारण आग लगने का खतरा बना रहता था। तीसरा, इस विशाल जनसमूह के कारण सामाजिक उथल-पुथल की आशंका दिखाई देने लगी थी। 1917 की रूसी क्रांति के बाद यह डर काफ़ी बढ़ गया था। लंदन के गरीब कहीं विद्रोह न कर डालें, इस आशंका से निपटने के लिए मज़दूरों के लिए आवासीय योजनाएँ शुरू की गईं।

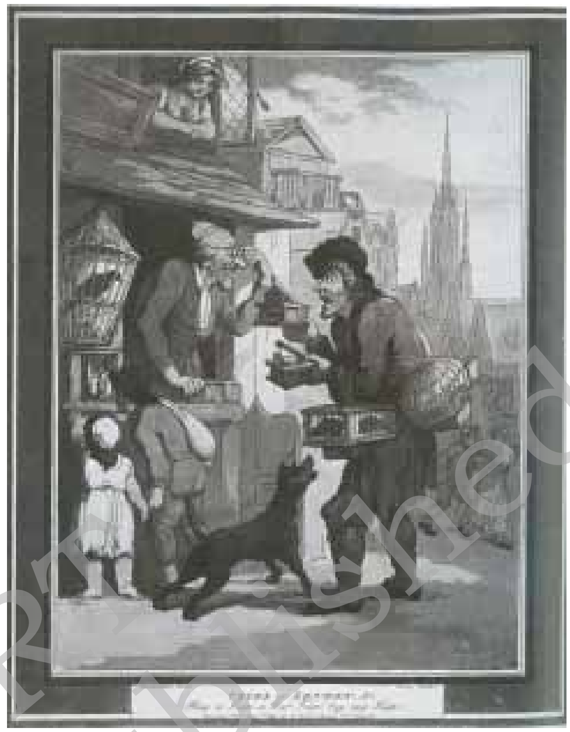

चित्र 3 - चूहेदानी बेचने वाला, रोलैंड्सन द्वारा बनाया कार्टून, 1799
रोलैंड्सन ने अपनी कृतियों में लंदन के उन काम-धंधों को दर्ज किया था जो औद्योगिक पूँजीवाद के आगमन के कारण खत्म होने लगे थे।

1.4 लंदन की सफ़ाई

लंदन को साफ़-सुथरा बनाने के लिए तरह-तरह से प्रयास किए गए। भीड़ भरी बस्तियों की भीड़ कम करने, खुले स्थानों को हरा-भरा बनाने, आबादी

चित्र 4 - लंदन की एक झोपड़पट्टी, 1899
इस तसवीर में सड़क का किन-किन कामों के लिए इस्तेमाल किया जा रहा है? बीसवीं सदी के मज़दूरों के आवासों में क्या बदलाव आने वाले थे?

गतिविधि

आज भारत के बहुत सारे शहरों में ग़रीबों की झोपड़पट्टियों को हटाया जा रहा है। आपस में चर्चा कीजिए कि सरकार को इन लोगों के लिए मकानों का इंतज़ाम करना चाहिए या नहीं।

© NCERT not to be republished

चित्र 5 – ग़रीबों के लिए आराम और मौज-मस्ती करने के लिए सड़क के अलावा और कोई जगह नहीं होती थी।* इलस्ट्रेटेड लंदन न्यूज़, *1856

उन्नीसवीं सदी में अभिजात्य तबक़े के लोग सड़कों पर बढ़ती शराबखोरी और गंदगी को लेकर काफ़ी चिंतित रहने लगे थे। आखिरकार शराबखोरी की समस्या से निपटने के लिए ***संयमता आंदोलन*** *शुरू किया गया।*

कम करने और शहर को योजनानुसार बसाने के लिए कोशिशें शुरू कर दी गईं। इसी तरह की आवासीय समस्याओं से जूझ रहे बर्लिन और न्यूयॉर्क जैसे शहरों की तर्ज़ पर अपार्टमेंट्स के विशाल ब्लॉक बनाए गए। लेकिन टेनेमेंट्स की वजह से यहाँ की समस्या विकट थी। मकानों की भारी किल्लत के असर को क़ाबू करने के लिए प्रथम विश्वयुद्ध के दौरान किराया नियंत्रण क़ानून लागू किया गया।

उन्नीसवीं सदी के औद्योगिक शहरों में घुटन भरे भीड़-भड़क्के ने देहाती साफ़ हवा की चाह बढ़ा दी थी। लंदन और पेरिस के बहुत सारे अमीर तो देहात में अवकाश गृह बनवाने का खर्चा उठा सकते थे पर यह विकल्प सबके पास नहीं था। शहर के लिए नए 'फेफड़ों' का इंतज़ाम करने की बात उठने लगी। लंदन के गिर्द हरित पट्टी आदि विकसित करके देहात और शहर के फ़ासले को पाटने के प्रयास भी किए गए।

गतिविधि

कल्पना कीजिए कि आप लंदन के ग़रीबों के रहन-सहन का अध्ययन कर रहे हैं। उन परिस्थितियों से जनता के स्वास्थ्य के लिए जो खतरे पैदा हो रहे थे उनके बारे में एक नोट लिखिए।

स्रोत-क

'खुले स्थानों पर बच्चों को भी नहीं भुलाया जाना चाहिए। उनकी छोटी-छोटी टाँगों के हिसाब से *किंडरबैंक* यानी छोटी सीटों का इंतज़ाम किया जाना चाहिए। जहाँ मुमकिन हो उनके लिए झूलों, नाव चलाने के लिए तालाबों और नावों को रखने के लिए रेत के किनारे भी होने चाहिए ताकि नावें साफ़-सुथरी रहें।'

स्रोत

नए शब्द

संयमता आंदोलन : मुख्य रूप से मध्यवर्ग के नेतृत्व में चलाया गया समाज सुधार आंदोलन जो इंग्लैंड और अमेरिका में उन्नीसवीं सदी से शुरू हुआ। इस आंदोलन में शराब को परिवार व समाज की तबाही के लिए ज़िम्मेदार ठहराया जाता था। इस आंदोलन में मुख्य रूप से कामकाजी तबक़े में नशीले पेय पदार्थों के उपभोग में कमी लाने पर ज़ोर दिया जाता था।

© NCERT not to be republished

वास्तुकार और योजनाकार एबेनेज़र हावर्ड ने गार्डन सिटी (बगीचों का शहर) की अवधारणा प्रस्तुत की। उन्होंने एक ऐसे शहर का खाका खींचा जहाँ पेड़-पौधों की भरमार हो और जहाँ लोग रहते भी हों, काम भी करते हों। उनका मानना था कि इस प्रकार बेहतर नागरिक तैयार करने में भी मदद मिलेगी। हावर्ड के विचारों के आधार पर रेमंड अनविन और बैरी पार्कर ने न्यू अर्ज़विक नाम से एक गार्डन सिटी का डिजाइन तैयार किया। इसमें साझा बाग-बगीचे, खूबसूरत नज़ारों का इंतजाम किया गया था। हर चीज़ को बड़ी बारीकी से सजाया गया था। लेकिन ऐसे मकानों को तो केवल खाते-पीते कामगार ही खरीद सकते थे।

चित्र 6 – न्यू अर्ज़विक, एक बगीचा-उपशहर। *ध्यान से देखिए कि इसमें चारों तरफ़ से बंद हरे-भरे स्थान के सहारे एक नया सामुदायिक जीवन विकसित हो रहा है।*

विश्वयुद्धों के दौरान (1919-39) मज़दूर वर्ग के लिए आवास का इंतज़ाम करने की ज़िम्मेदारी ब्रिटिश राज्य ने अपने ऊपर ले ली और स्थानीय शासन के ज़रिये 10 लाख मकान बनाए गए। इनमें से ज़्यादातर एक परिवार के रहने लायक छोटे मकान थे। इस दौरान शहर इतना फैल चुका था कि अब लोग पैदल अपने काम तक नहीं जा सकते थे। शहर के आसपास यानी उपशहरी बस्तियों के अस्तित्व में आने से सार्वजनिक परिवहन व्यवस्था अनिवार्य हो चुकी थी।

1.5 शहर में आवागमन

अगर लोगों को उपनगरीय बस्तियों से शहर तक लाने के लिए यातायात की सुविधा नहीं है तो भला लोगों को शहर छोड़ कर उपनगरीय गार्डन आबादियों में जाकर रहने के लिए कैसे तैयार किया जा सकता था? लंदन के भूमिगत रेलवे ने आवास की समस्या को एक हद तक हल कर दिया था। इसके ज़रिये भारी संख्या में लोग शहर के भीतर-बाहर आ-जा सकते थे।

दुनिया की सबसे पहली भूमिगत रेल के पहले खंड का उद्घाटन 10 जनवरी 1863 को किया गया। यह लाइन लंदन की पैडिंग्टन और फैरिंग्टन स्ट्रीट के बीच स्थित थी। पहले ही दिन 10,000 यात्रियों ने इस रेल में यात्रा की। इस लाइन पर हर दस मिनट में अगली गाड़ी आ रही थी। 1880 तक भूमिगत रेल नेटवर्क का विस्तार हो चुका था और उसमें सालाना चार करोड़ लोग यात्रा करने लगे थे। शुरू में भूमिगत यात्रा की कल्पना से लोग डर जाते थे। इस बारे में अखबार के एक पाठक ने इन शब्दों में चेतावनी दी थी :

> मैं जिस डिब्बे में बैठा था वह पाइप पीते मुसाफ़िरों से भरा हुआ था। डिब्बे का माहौल सल्फ़र, कोयले की धूल, और ऊपर लगे गैस के लैंप से निकलती गंध से अटा हुआ था। हालत ये थी कि जब हम मूरगेट स्टेशन पहुँचे तब तक मैं **श्वासावरोधन** और गर्मी के कारण अधमरा हो चुका था। मेरा मानना है कि इन भूमिगत रेलगाड़ियों को फ़ौरन बंद कर दिया जाना चाहिए। ये स्वास्थ्य के लिए भयानक खतरा हैं।

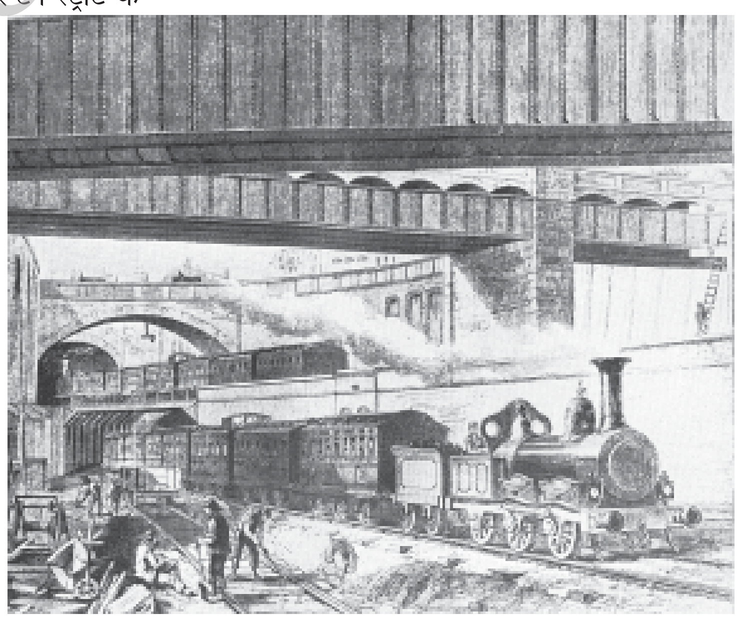

चित्र 7 – लंदन में रेलवे लाइनें बिछायी जा रही हैं। इलस्ट्रेटेड टाइम्स, 1868

© NCERT not to be republished

बहुत सारे लोगों का मानना था कि इन 'लौह दैत्यों' ने शहर की अफ़रा-तफ़री और अस्वास्थ्यकर माहौल को और बढ़ा दिया है। निर्माण की प्रक्रिया में होने वाले बेहिसाब विनाश के बारे में चार्ल्स डिकेन्स ने *डॉम्बी एंड सन* (1848) में लिखा–

> मकान गिरा दिए गए; सड़कों को तोड़ कर बंद कर दिया गया; ज़मीन में गहरे गड्ढे और खाइयाँ खोद दी गईं; चारों तरफ बेहिसाब मिट्टी और धूल के अंबार लगा दिए; ...अधूरेपन की सौ हजार शक्लें और पदार्थ सामने थे, उलट-पुलट अपनी जगह अदलते-बदलते, ज़मीन में धँसे हुए ...।

तकरीबन दो मील लंबी रेलवे लाइन बिछाने के लिए औसतन 900 घर गिरा दिए जाते थे। इस प्रकार लंदन में बनी ट्यूब रेलवे के कारण लंदन के ग़रीबों को बड़ी संख्या में उजाड़ा गया, खास तौर से दो विश्वयुद्धों के बीच।

बहरहाल, इन सारी अड़चनों के बावजूद भूमिगत रेलवे एक ज़बरदस्त कामयाबी साबित हुई। बीसवीं सदी आते-आते न्यूयॉर्क, टोकियो और शिकागो जैसे ज़्यादातर विशाल महानगर अपनी सुव्यवस्थित सार्वजनिक परिवहन व्यवस्था के बिना नहीं रह सकते थे। नतीजा यह हुआ कि शहर की आबादी और बिखरने लगी। सुनियोजित उपनगरीय इलाक़ों और अच्छे रेल नेटवर्क की बदौलत बहुत सारे लोगों के लिए मध्य लंदन से बाहर रहते हुए रोज़ काम पर आना आसान हो गया।

इन नयी सुविधाओं ने सामाजिक ऊँच-नीच को कमज़ोर किया तो नए क़िस्म के विभेद भी पैदा कर दिए। इन बदलावों से लोगों के घरेलू और सार्वजनिक जीवन पर क्या असर पड़ा? क्या उनका सभी सामाजिक समूहों के लिए एक जैसा महत्त्व था?

चित्र 9 - लंदन की सड़कों पर गाएँ, द ग्राफ़िक, 1877
आधुनिक शहर बनाने के लिए सड़कों को भी साफ़ करने का फ़ैसला लिया गया। उन्नीसवीं सदी में लंदन की सड़कों पर गायों की वजह से अक्सर ट्रैफ़िक जाम हो जाता था।

नए शब्द

श्वासावरोधन : ऑक्सीजन की कमी के कारण दम घुटने का अहसास होना।

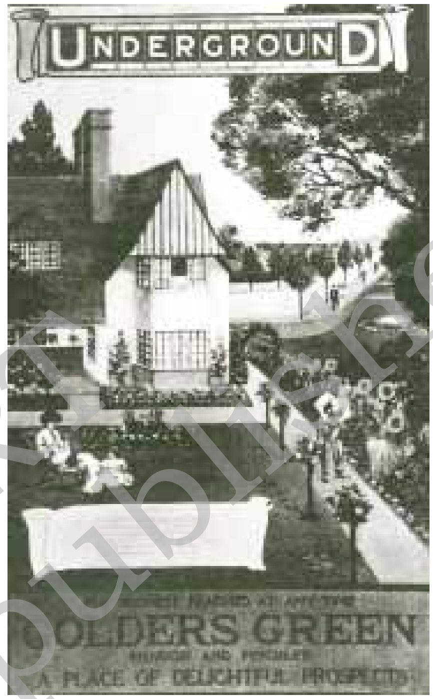

चित्र 8 - गोल्डर्स ग्रीन स्टेशन के लिए लंदन अंडरग्राउंड का विज्ञापन, सन् 1900 के आसपास।
विज्ञापन में लोगों को हरे-भरे, कम भीड़ वाले, सुंदर उपशहरी इलाक़ों में बसने के लिए प्रेरित किया जा रहा है।

© NCERT not to be republished

2 शहर में सामाजिक बदलाव

अठारहवीं सदी में परिवार उत्पादन और उपभोग के साथ-साथ राजनीतिक निर्णय लेने के लिहाज़ से भी एक महत्वपूर्ण इकाई था। औद्योगिक शहर में जीवन के रूप रंग ने परिवार की उपादेयता और स्वरूप को पूरी तरह बदल डाला।

परिवार के सदस्यों के बीच अब तक जो बंधन थे वे ढीले पड़ने लगे। मज़दूर वर्ग में विवाह संस्था टूटने की कगार पर पहुँच गई। दूसरी ओर ब्रिटेन के उच्च एवं मध्यवर्ग की औरतें अकेलापन महसूस करने लगी थीं हालाँकि नौकरानियों के आ जाने से उनकी ज़िंदगी काफ़ी आसान हो गई थी। ये नौकरानियाँ बहुत मामूली वेतन पर घर का खाना बनाती थीं, साफ़-सफ़ाई का काम करती थीं और बच्चों की देखभाल भी करती थीं।

वेतन के लिए काम करने वाली औरतों का अपने जीवन पर ज़्यादा नियंत्रण था। विशेष रूप से निम्नतर सामाजिक वर्गों की महिलाओं का अपने जीवन पर अच्छा-खासा नियंत्रण था। बहुत सारे समाज सुधारकों का मानना था कि एक संस्था के रूप में परिवार टूट चुका है। इस आशंका को दूर करने के लिए उन्होंने सुझाव दिया कि घर से बाहर जाकर काम करने वाली औरतों को दोबारा घर की चारदिवारी में भेजा जाए।

2.1 शहर में मर्द, औरत और परिवार

इसमें कोई संदेह नहीं कि शहर पुरुषों और महिलाओं, दोनों में **व्यक्तिवाद** की एक नयी भावना पैदा कर रहा था। वे सामूहिक मूल्य-मान्यताओं से दूर जाने लगे थे जोकि छोटे ग्रामीण समुदायों की खासियत थी। परंतु इस नयी शहरी परिधि में पुरुषों व महिलाओं की पहुँच एकसमान नहीं थी। जैसे-जैसे औरतों के औद्योगिक रोज़गार खत्म होने लगे और रूढ़िवादी तत्व सार्वजनिक स्थानों पर उनकी उपस्थिति के बारे में अपना असंतोष व्यक्त करने लगे, औरतों के पास वापस अपने घरों में लौटने के अलावा कोई चारा नहीं रहा। सार्वजनिक परिधि केवल पुरुषों का दायरा बनती चली गई और घरेलू दायरे को ही औरतों के लिए सही जगह माना जाने लगा। उन्नीसवीं शताब्दी के ज़्यादातर आंदोलनों, जैसे चार्टिज़्म (सभी वयस्क पुरुषों के लिए मताधिकार के पक्ष में चलाया गया आंदोलन), दस घंटे का आंदोलन (कारखानों में काम के घंटे निश्चित करने के लिए चला आंदोलन) में पुरुष बड़ी संख्या में एकजुट हुए। औरतों के मताधिकार आंदोलन या विवाहित औरतों के लिए संपत्ति में अधिकार आदि आंदोलनों के माध्यम से महिलाएँ काफ़ी समय बाद जाकर (1870 के दशक से) राजनीतिक गतिविधियों में हिस्सा लेने के लिए तैयार हो पाईं।

नए शब्द

व्यक्तिवाद : वह सिद्धांत जिसमें समुदाय की नहीं बल्कि व्यक्ति की स्वतंत्रता, अधिकारों और स्वतंत्र कार्रवाई की हिमायत की जाती है।

© NCERT not to be republished

बीसवीं शताब्दी तक शहरी परिवार एक बार फिर बदलने लगा था। इसके पीछे आंशिक रूप से युद्ध के दौरान औरतों के बहुमूल्य योगदान का भी हाथ था। युद्ध की ज़रूरतों को पूरा करने के लिए महिलाओं को बड़ी संख्या में काम पर रखा जाने लगा था। इन परिस्थितियों में परिवार काफ़ी छोटा हो गया था।

सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह थी कि अब परिवार वस्तुओं और सेवाओं के, तथा विचारों के नए बाज़ार का केंद्रबिंदु बन चुका था। यदि नए औद्योगिक शहर ने सामूहिक श्रम के लिए नए अवसर उपलब्ध कराए तो उसने रविवार और अन्य छुट्टियों के दिनों में आमोद-प्रमोद और मनोरंजन की समस्या भी खड़ी कर दी। लोगों का मनोरंजन करने के लिए जो समय मिला उसका उन्होंने किस प्रकार प्रयोग किया?

2.2 मनोरंजन और उपभोग

अमीर ब्रिटेनवासियों के लिए बहुत पहले से ही 'लंदन सीज़न' की परंपरा चली आ रही थी। अठारहवीं सदी के आखिरी दशकों में 300-400 संभ्रांत परिवारों के समूह के लिए ऑपेरा, रंगमंच और शास्त्रीय संगीत आदि कई प्रकार के सांस्कृतिक आयोजन किए जाते थे। मेहनतकश अपना खाली समय पब या शराबघरों में बिताते थे। इस मौक़े पर वे खबरों का आदान-प्रदान भी करते थे और कभी-कभी राजनीतिक कार्रवाइयों के लिए गोलबंदी भी करते थे।

धीरे-धीरे आम लोगों के लिए भी मनबहलाव के तरीक़े निकलने लगे। इनमें से कुछ सरकारी पैसे से शुरू किए गए थे। उन्नीसवीं सदी में लोगों को इतिहास का बोध देने के लिए और लोगों को ब्रिटेन की उपलब्धियों से परिचित कराने के लिए बहुत सारे पुस्तकालय, कला दीर्घाएँ और संग्रहालय खोले जाने लगे। शुरुआती दिनों में लंदन स्थित ब्रिटिश म्यूज़ियम में आने वालों की सालाना तादाद सिर्फ 15,000 थी। 1810 से इस संग्रहालय में प्रवेश शुल्क समाप्त कर दिया गया तो दर्शकों की संख्या तेज़ी से बढ़ने लगी। 1824-25 में 1,27,643 दर्शक आए जबकि 1846 तक दर्शकों की संख्या बढ़कर 8,25,901 तक जा पहुँची। निचले वर्ग के लोगों में संगीत सभा काफ़ी लोकप्रिय थी और बीसवीं सदी आते-आते तो विभिन्न पृष्ठभूमि के लोगों के लिए सिनेमा भी मनोरंजन का ज़बरदस्त साधन बन गया।

ब्रिटिश औद्योगिक मज़दूरों को छुट्टी के दिनों में समुद्र किनारे जाने की सलाह दी जाती थी जिससे वे खुली धूप और स्वच्छ हवा का आनंद ले सकें। 1883 में ब्लैकपूल स्थित समुद्र तट पर सैर-सपाटे के लिए आने वालों की संख्या 10 लाख से ज़्यादा थी जो 1939 तक 70 लाख से ऊपर जा चुकी थी।

चित्र 10 - लंदन का एक प्रसिद्ध रिज़ॉर्ट, टी.ई. टर्नर की पेंटिंग, 1923
आनंद बागों का विकास उन्नीसवीं सदी में शुरू हुआ और उनमें संपन्न तबक़े के लोगों के लिए खेलकूद, मनोरंजन व खाने-पीने के इंतज़ाम होते थे।

© NCERT not to be republished

चित्र 11 – पूर्वी लंदन में नाविकों का मिलनघर, इलस्ट्रेटेड लंदन न्यूज़, 1873
कामकाजी ग़रीब जहाँ भी रहते थे अपने मनोरंजन के ठिकाने बना ही लेते थे।

चित्र 12 – शराबघर के बाहर खड़ी घोड़ागाड़ियाँ, उन्नीसवीं शताब्दी का प्रारंभ।
इस तसवीर से पता चलता है कि उन्नीसवीं सदी की शुरुआत में शराबख़ानों और घोड़ागाड़ियों के बीच कितना ग़हरा रिश्ता था। रेलवे के आने से पहले शराबख़ाने ऐसे स्थान थे जहाँ आकर घोड़ागाड़ियाँ रुकती थीं और थके हुए मुसाफ़िर शराबख़ाने में ही खाते-पीते और सोते थे। शराबघर आमतौर पर घोड़ागाड़ियों के रास्ते में स्थित होता था और उनमें रात को रुकने का इंतज़ाम रहता था। रेलवे और बस परिवहन के आगमन के बाद घोड़ागाड़ियों और शराबख़ानों का इस्तेमाल कम होने लगा। रेलवे स्टेशनों और बस अड्डों के पास ही शराबघर खुलने लगे। यहाँ लोग फटाफट पीने और गपशप के लिए ठहरते थे और फिर सफ़र पर निकल पड़ते थे।

© NCERT not to be republished

3 शहर में राजनीति

1886 में कड़ाके की सर्दी के दिनों में चारदीवारी के बाहर काम करना असंभव हो गया तो लंदन के ग़रीब दंगों पर उतारू हो गए। उनकी माँग थी कि उन्हें भयानक ग़रीबी से आजादी दिलाई जाए। डेप्टफ़ोर्ड से लंदन की ओर बढ़े चले आ रहे 10, 000 लोगों की भीड़ से भयभीत दुकानदारों ने अपनी दुकानें बंद कर दीं। जुलूस को तितर-बितर करने के लिए पुलिस बुलाई गई। इसी तरह का दंगा 1887 के आखिरी महीनों में भी हुआ। इस बार पुलिस ने ज़्यादा सख्ती दिखाई। इस पुलिस कार्रवाई को नवंबर 1887 के खूनी रविवार के नाम से याद किया जाता है।

दो साल बाद लंदन के हज़ारों गोदी कामगारों ने हड़ताल कर दी और शहर भर में जुलूस निकाले। एक लेखक के अनुसार, 'हज़ारों हड़ताली शहर भर में जुलूस निकाल रहे थे लेकिन न तो किसी की जेब कटी और न कोई खिड़की टूटी...।' 12 दिन तक चली इस हड़ताल में मज़दूरों की माँग थी कि गोदी कामगारों की यूनियन को मान्यता दी जाए।

इन उदाहरणों से आप अच्छी तरह समझ सकते हैं कि शहर में बहुत सारे लोगों को एक साथ राजनीतिक कार्रवाइयों में खींचा जा सकता था। इस प्रकार शहर की विशाल जनसंख्या एक अवसर भी थी और एक खतरा भी। शहरों में विद्रोह की आशंकाओं को कम करने और शहरों को सुंदर बनाने के लिए सरकारी तंत्र ने हर संभव उपाय किए हैं। इस बात को पेरिस के बारे में दिए गए उदाहरणों से समझा जा सकता है।

© NCERT not to be republished

चित्र 13 – गोदी कामगारों की हड़ताल का एक दृश्य, 1889

बॉक्स 1

पेरिस का हॉसमानीकरण

सन् 1852 में लुई नेपोलियन III (नेपोलियन बोनापार्ट का भतीजा) ने खुद को सम्राट घोषित कर दिया। सत्ता सँभालने के बाद उसने पूरे जोश से पेरिस के पुनर्निर्माण का काम शुरू कर दिया। नए पेरिस के निर्माण का काम बैरॉन हॉसमान नामक वास्तुकार को सौंपा गया जो सियाँ का प्रिफ़ेक्ट था। उसका नाम सुंदरता और व्यवस्था के नाम पर शहरों के जबरन पुनर्निर्माण का पर्याय बन चुका है। उसने शहर को खूबसूरत बनाने और किसी भी तरह की बग़ावत की आशंका को दूर करने के लिए पेरिस के मध्य से ग़रीबों की बस्तियों को साफ़ करवा दिया था।

1852 के बाद 17 साल तक हॉसमान पेरिस के पुनर्निर्माण में लगा रहा। शहर भर में सीधी, चौड़ी सड़कें या बुलेवर्ड्स (छायादार सड़क) बनाई गईं, खुले मैदान बनाए गए और बड़े-बड़े पेड़ लगा दिए गए। 1870 तक पेरिस की सड़कों में से 20 प्रतिशत हॉसमान की योजना के अनुसार बनाई जा चुकी थीं। पूरे शहर में पुलिस को तैनात किया गया, रात में गश्त शुरू की गई और बस अड्डों व टोंटी के पानी का इंतज़ाम किया गया।

इतने बड़े पैमाने पर काम करने के लिए बहुत सारे लोगों की ज़रूरत थी। 1860 के दशक में पेरिस के प्रत्येक पाँच कामकाजी लोगों में से एक निर्माण कार्यों में लगा था। इस पुनर्निर्माण अभियान में पेरिस के बीच रहने वाले 3,50,000 लोगों को उजाड़ दिया गया था।

पेरिस के कुछ संपन्न निवासियों को भी लगता था कि उनके शहर को दानवी ढंग से बदल दिया गया है। उदाहरण के लिए, 1860 में गॉनकोर्ट बंधुओं ने अपने लेखन में पुरानी जीवनशैली के खत्म हो जाने और एक उच्चवर्गीय संस्कृति के स्थापित हो जाने पर गहरा दुख व्यक्त किया था। बहुतों का मानना था कि हॉसमान ने एक जैसे दिखने वाले बुलेवर्ड्स और छज्जों से भरा सुनसान, उदास शहर बनाने के लिए सड़क के जीवन और 'सड़कों को मार डाला' है। 1866 में लिखे गए *मेज़ों न्यूवे* नाटक में एक बूढ़ा दुकानदार कहता है, 'अब तो जरा सी सैर के लिए भी मीलों जाना पड़ता है! ऐसी पटरियाँ बना दी गई हैं जो कहीं खत्म ही नहीं होतीं! एक पेड़, एक बेंच, एक खोखा! एक पेड़, एक बेंच, एक खोखा! एक पेड़, एक बेंच, ...।'

लेकिन हॉसमान के पेरिस के बारे में मचा यह हल्ला जल्दी ही गर्व के भाव में तब्दील हो गया। यह नयी राजधानी पूरे यूरोप के लिए ईर्ष्या का विषय बन चुकी थी। पेरिस बहुत सारे ऐसे वास्तुशिल्पीय, सामाजिक और बौद्धिक प्रयोगों का केंद्र बन गया जो पूरी सदी तक यूरोप ही नहीं बल्कि पूरी दुनिया पर अपना असर डालते रहे।

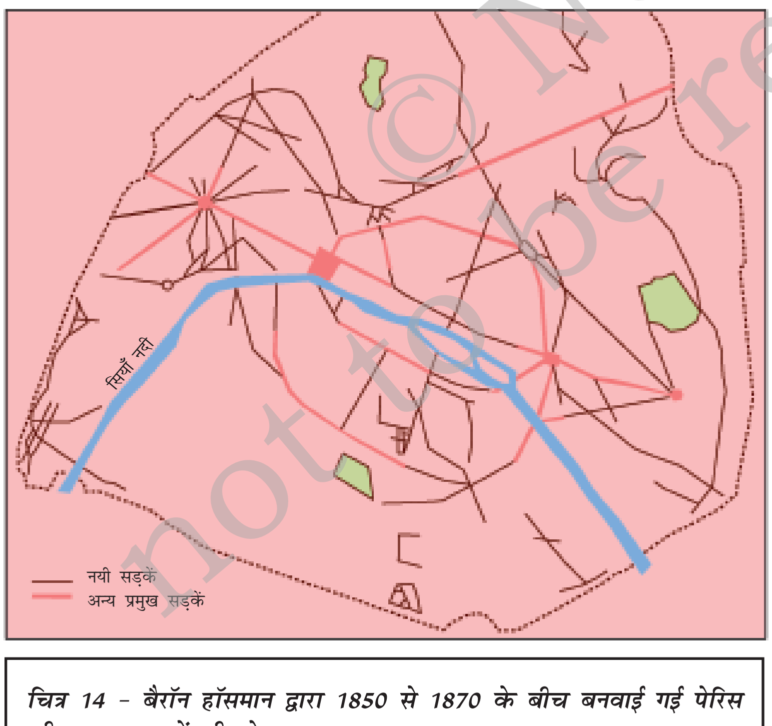

चित्र 14 - बैरॉन हॉसमान द्वारा 1850 से 1870 के बीच बनवाई गई पेरिस की प्रधान सड़कों की योजना।

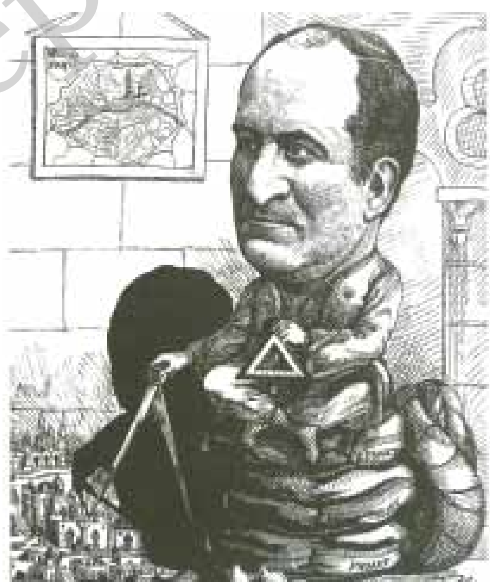

चित्र 15 - इस कार्टून में हॉसमान को परकार और तिकोनी हाथ में लिए पेरिस की योजना तय करते 'सीधी लकीरों का अतिला' के रूप में दर्शाया गया है। (प्रसंगवश, अतिला को हूण वंश का सबसे बर्बर आक्रमणकारी माना जाता है।)

© NCERT not to be republished

4 औपनिवेशिक भारत के शहर

पश्चिमी यूरोपीय शहरों के विपरीत उन्नीसवीं सदी में हमारे शहर इतनी तेज़ी से नहीं फैले। औपनिवेशिक शासन के दौरान भारत में शहरीकरण की रफ़्तार धीमी ही रही। बीसवीं सदी की शुरुआत में हमारे देश के केवल 11 प्रतिशत लोग शहरों में रहते थे। इस शहरी आबादी में से भी बहुत बड़ी संख्या तीन विशाल **प्रेसीडेंसी शहरों** में रहती थी। ये बहुउपयोगी किस्म के शहर थे। उनमें बड़े-बड़े बंदरगाह थे, वेयरहाउस थे, घर व दफ़्तर थे, सेना की छावनियाँ थीं और शैक्षणिक संस्थान, संग्रहालय व पुस्तकालय थे। बंबई भारत का एक प्रमुख शहर था। उन्नीसवीं सदी के आखिरी सालों से बंबई तेज़ी से फैलने लगा था। 1872 में उसकी आबादी 6, 44, 405 थी जो 1941 में 15, 00, 000 तक पहुँच चुकी थी।

आइए, देखें बंबई का विकास कैसे हुआ।

नए शब्द

प्रेसीडेंसी शहर : ब्रिटिश शासन के समय बंबई, बंगाल और मद्रास प्रेसिडेंसी की राजधानियाँ।

चर्चा करें

स्रोत-ख को ध्यान से पढ़ें। इसमें लेखकों ने शहरी जीवन के कौन से साझा पहलू गिनाए हैं? उन्होंने कौन से अंतर्विरोधी अनुभवों का उल्लेख किया है?

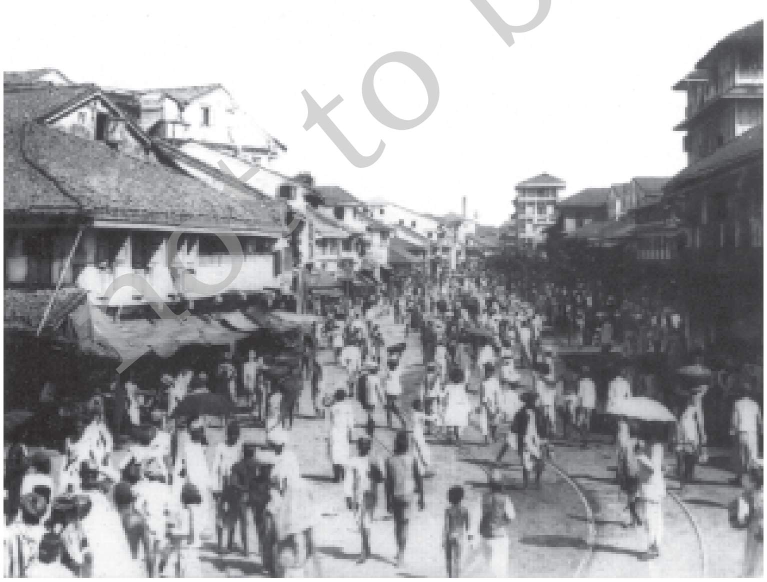

चित्र 16 – नल बाज़ार, बंबई की एक भीड़भाड़ वाली सड़क, राजा दीन दयाल द्वारा लिया गया उन्नीसवीं सदी के आखिरी सालों का चित्र।

स्रोत-ख

शहर के अंतर्विरोधी अनुभव

काली प्रसन्न सिंह ने 1862 के आसपास कलकत्ता के भारतीय हिस्से में शाम के दृश्य का वर्णन करते हुए बंगला में एक व्यंग्य लिखा था–

'शनैः-शनैः अँधेरा गहराने लगता है। अंग्रेज़ी जूतों, शांतिपुर के धारीदार मफलरों और शिमला की धोतियों की मेहरबानी से इस समय आप ऊँच-नीच का फ़र्क नहीं कर सकते। तेज़-तर्रार नौजवानों की टोली हँसी-ठट्ठा करते और अंग्रेज़ी में बात करते हुए कभी इस तो कभी उस दरवाज़े पर दस्तक देती है। वे तब घर से निकले थे जब शाम की बत्तियाँ जलने लगी थीं और उस समय घर लौटेंगे जब आटे की चक्कियों की आवाज़ आने लगेगी। ... कुछ ने अपने चेहरे मफ़लरों से ढँक लिए हैं। वे मान बैठे हैं कि अब उन्हें कोई पहचान नहीं सकता। यह ... शनिवार की शाम है और शहर में असामान्य भीड़ है।'

हुतम प्यांचेर नक्शा, कलकत्ता के शहरी जीवन के बारे में संक्षिप्त टिप्पणियों का संग्रह, 1862. अनुवाद : बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय।

1899 में जी.जी. अगरकर ने बंबई के बारे में लिखा–

'बंबई शहर का बेहिसाब विस्तार; उसके विशाल एवं महलनुमा निजी व सरकारी हवेलियाँ; चौड़ी सड़कें जिन पर एक साथ छः घोड़ागाड़ियाँ चल सकती हैं... व्यापारिक गलियों में घुसने के लिए मारामारी; मुसाफ़िरों और मालगाड़ियों की सीटी व पहियों का बार-बार आने वाला भयानक शोर; तरह-तरह की चीज़ें खरीदने निकले और जेबों में चाँदी के सिक्के व नोट लिए यहाँ से वहाँ भटकते गाहकों द्वारा हर बाज़ार में जमकर सौदेबाज़ी; समंदर के किनारे हज़ारों नौकाओं के रेले... बार-बार घड़ी देखते सरकारी और ग़ैरसरकारी मुलाज़िमों की कमोबेश तेज़ रफ्तार...। फ़ैक्ट्रियों की चिमनियों से निकलते धुएँ के बादल और इमारतों के भीतर से उठता मशीनों का शोर...। क्षितिज पर डूबते सूर्य की तिरछी किरणों में हर जात, हर तबक़े के औरत-मर्द सपरिवार या अकेले, बग्घियों में या पैदल समुद्र किनारे हवा खाने और सैर के लिए निकले हैं...।'

जी.जी. अगरकर, *'द ऑब्ज़र्व्स साइड ऑफ़ ब्रिटिश रूल ऑर अवर डायर पॉवर्टी।'*

स्रोत

© NCERT not to be republished

4.1 बंबई : भारत का सबसे महत्त्वपूर्ण शहर?

सत्रहवीं शताब्दी में बंबई सात टापुओं का समूह था और उस पर पुर्तगालियों का नियंत्रण था। 1661 में ब्रिटेन के राजा चार्ल्स द्वितीय का विवाह पुर्तगाल की राजकुमारी से हुआ तो ये टापू अंग्रेज़ों के हाथों में चले गए। इसके बाद ईस्ट इंडिया कंपनी ने भी पश्चिमी भारत के अपने सबसे मुख्य बंदरगाह सूरत से अपना मुख्यालय बंबई में क़ायम कर लिया।

चित्र 17 – बंबई का एक नज़ारा, 1852
इस चित्र में आप दाएँ सिरे पर कोलाबा का लाइटहाउस और पृष्ठभूमि में सेंट थॉमस का गिरजा देख सकते हैं। उन्नीसवीं सदी के मध्य में भी चित्रकारों को खूबसूरत दृश्य मिल जाते थे। बड़ी विकास परियोजनाएँ अभी शुरू नहीं हुई थीं।

शुरू-शुरू में बंबई का महत्त्व गुजरात से आने वाले कपड़े के निर्यात के लिए ही ज़्यादा था। उन्नीसवीं सदी में बाद के सालों के दौरान बंबई एक बंदरगाह के रूप में विकसित होने लगा जहाँ से कपास और अफ़ीम जैसे कच्चे माल बड़ी तादाद में रवाना किए जा सकते थे। धीरे-धीरे यह पश्चिमी भारत का एक महत्वपूर्ण प्रशासकीय केंद्र भी बन गया। सदी के आखिर तक आते-आते बंबई देश का एक बड़ा औद्योगिक केंद्र बन चुका था।

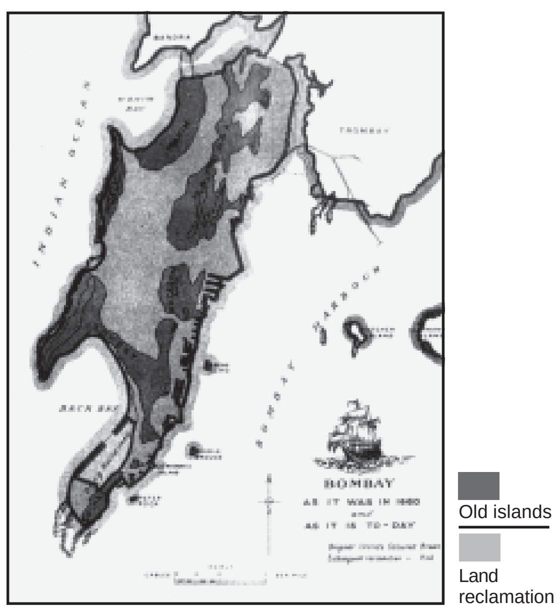

चित्र 18 – 1930 के दशक में बंबई का मानचित्र जिसमें सातों टापुओं और विकसित की गई ज़मीन को देखा जा सकता है।

4.2 शहर में रोज़गार

अंग्रेज-मराठा युद्ध में मराठों की हार के बाद 1819 में बंबई को बंबई प्रसीडेंसी की राजधानी घेषित कर दिया गया। इसके बाद शहर तेज़ी से फैलने लगा। कपास और अफ़ीम के बढ़ते व्यापार के चलते न केवल बहुत सारे व्यापारी और महाजन बल्कि तरह-तरह के कारीगर और दुकानदार भी बंबई में आकर बसने लगे। कपड़ा मिलें खुलने के बाद और भी ज़्यादा संख्या में लोग शहर की तरफ़ रुख करने लगे।

© NCERT not to be republished

बंबई में पहली सूती कपड़ा मिल 1854 में स्थापित की गई थी। 1921 में वहाँ ऐसी 85 कपड़ा मिलें खुल चुकी थीं जिनमें 1,46,000 मज़दूर काम करते थे। 1881 से 1931 के बीच बंबई में रहने वालों में से लगभग एक चौथाई ही ऐसे थे जिनका जन्म बंबई में हुआ था। बाक़ी निवासी बाहर से आकर वहाँ बसे थे। पास में ही स्थित रत्नागिरी ज़िले के बहुत सारे लोग कपड़ा मिलों में काम करने के लिए बंबई आ रहे थे।

1919 से 1926 के बीच मिलों में काम करने वाले मज़दूरों में औरतों की संख्या 23 प्रतिशत थी। इसके बाद कामकाजी आबादी में उनकी संख्या लगातार गिरती चली गई और आखिर में उनका हिस्सा केवल 10 प्रतिशत पर सिमट कर रह गया। तीस के दशक के आखिर तक औरतों के काम या तो मशीनों से किए जाने लगे थे या उनके काम पुरुष मज़दूरों को सौंपे जाने लगे।

बीसवीं सदी के बहुत साल बीत जाने के बाद भी भारत के समुद्री व्यापार पर बंबई का ही दबदबा बना हुआ था। बंबई शहर दो प्रमुख रेलवे नेटवर्कों का जंक्शन या मिलन बिंदु था। रेलवे के कारण शहर में आने वालों को और सुविधा महसूस होने लगी। उदाहरण के लिए, 1888–89 में कच्छ के सूखे इलाक़ों में पड़े अकाल के कारण असंख्य लोग बंबई आ गए। आप्रवासियों की इस बाढ़ से प्रशासनिक दायरों में बेचैनी और भय पैदा होने लगा था। 1898 में प्लेग की महामारी के कारण जब लोगों के रेले के रेले बंबई में आने लगे तो ज़िला प्रशासन ने लोगों को वापस भेजना शुरू कर दिया। 1901 तक लगभग 30,000 लोगों को उनके मूल स्थानों पर वापस भेजा जा चुका था।

गतिविधि

निम्नलिखित शीर्षक पर अपनी कक्षा में पक्ष और विपक्ष में बहस कीजिए: 'समुदायों और जीवनशैलियों को नष्ट किए बिना शहरों का विकास नहीं किया जा सकता। यह विकास का अभिन्न अंग है।'

4.3 आवास और पड़ोस

बंबई भीड़-भाड़ वाला शहर था। 1840 के दशक में लंदन का क्षेत्रफल प्रति व्यक्ति 155 वर्ग गज़ था जबकि बंबई का प्रति व्यक्ति क्षेत्रफल केवल 9.5 वर्ग गज़ था। 1872 में लंदन में प्रति मकान औसतन 8 आदमी रहते थे जबकि बंबई में प्रति मकान 20 आदमी थे। शुरू से ही बंबई किसी योजना के अनुसार विकसित नहीं हुआ। मकानों के बीच में ही बाग़-बग़ीचे फैले हुए थे। फ़ोर्ट एरिया में ऐसी स्थिति कुछ ज़्यादा ही दिखाई देती थी। सन् 1800 के आसपास बंबई फ़ोर्ट एरिया शहर का केंद्र था और दो हिस्सों में बँटा हुआ था। एक हिस्से में 'नेटिव' रहते थे और दूसरे हिस्से में यूरोपीय या 'गोरे' रहा करते थे। फ़ोर्ट आबादी के उत्तर में एक यूरोपीय उपनगर और औद्योगिक पट्टी भी विकसित होने लगी थी। दक्षिण में भी इसी तरह की उपनगरीय आबादी और एक छावनी थी। यह नस्ली विभाजन तीनों प्रेसीडेंसी शहरों में दिखाई देता था।

शहर के तीव्र और अनियोजित विस्तार के कारण 1850 के दशक तक शहर में आवास और जलापूर्ति की समस्या बहुत बढ़ चुकी थी। कपड़ा मिलों के चालू होने के बाद तो बंबई के आवासीय इलाक़ों पर दबाव और बढ़ गया था।

चित्र 19 – जे.एन. टाटा के लिए 1887 में समुद्र किनारे बनाई गई हवेली का भीतरी दृश्य।

© NCERT not to be republished

चित्र 24 – बंबई का दृश्य, रॉबर्ट ग्रिंडले, 1826
चौक से बहुत सारी पालकियाँ गुजर रही हैं।

यूरोपीय अमीरों और अफ़सरों की तरह अमीर पारसी, मुसलमान और ऊँची जाति के व्यापारी व उद्योगपति भी लंबे-चौड़े बंगलों में रहते थे। इसके विपरीत बंबई की 70 फीसदी जनता घनी आबादी वाली चॉलों में रहती थी। मज़दूरों को काम पर पैदल जाना पड़ता था इसलिए 90 प्रतिशत मिल मज़दूर गिरनगाँव नामक 'मिल गाँव' में रहते थे जो मिलों से बमुश्किल 15 मिनट के फ़ासले पर पड़ता था।

बंबई की चॉल बहुमंजिला इमारतें होती थीं। शहर के 'नेटिव' हिस्से में इस तरह की इमारतें कम से कम 1860 के दशक से तो बनने ही लगी थीं। लंदन के टेनेमेंट्स की तरह ये मकान भी मोटे तौर पर निजी संपत्ति होते थे। बाहर से आने वालों की आवासीय ज़रूरतों को पूरा करने के लिए व्यापारी, महाजन और भवन निर्माता ठेकेदार इस तरह की इमारतें बनवाते थे। प्रत्येक चॉल में कमरों की क़तारें होती थीं। कमरों के लिए अलग-अलग शौचालय नहीं बनाए जाते थे।

एक टेनेमेंट में एक साथ कई परिवार रह सकते थे। 1901 की जनगणना में बताया गया था कि 'टापू की आबादी का बहुत बड़ा हिस्सा यानी कुल आबादी का 80 प्रतिशत एक कमरे वाले टेनेमेंट्स में रहता है; हर कमरे में औसतन 4 से 5 आदमी रहते हैं...।' कमरों का भाड़ा बहुत ऊँचा था इसलिए कई मज़दूर मिलकर एक कमरा ले लेते थे। वे या तो अपने रिश्तेदारों के साथ या अपनी ही जात-बिरादरी के मज़दूरों के साथ रहना पसंद करते थे। 'गंदे गटर, नालियाँ, भैंसों के तबेलों इत्यादि के नज़दीक होने के कारण' कमरों की खिड़कियाँ बंद ही रहती थीं चाहे मौसम कितना भी आर्द्र क्यों न हो। पानी की समस्या हमेशा रहती थी। नलके पर अपनी बारी के चक्कर में लोग सुबह को अकसर झगड़ बैठते थे लेकिन प्रेक्षकों का कहना है कि फिर भी उनके घर साफ़ रहते थे।

गतिविधि

चित्र 20 को देखिए। आपके विचार में इस तरह के परिवहन साधनों का इस्तेमाल किस तरह के लोग करते होंगे? इसकी तुलना घोड़ों द्वारा खींची जाने वाली ट्राम और बिजली से चलने वाली ट्राम के साथ कीजिए। आप देख सकते हैं कि दोनों तरह के साधनों में संख्याओं के बीच बिलकुल उलटा रिश्ता दिखाई देता है : घोड़े वाली ट्राम या बिजली की ट्राम के लिए सिर्फ़ एक ऑपरेटर की ज़रूरत पड़ती थी जबकि पालकी में एक सवारी होती थी और उसे ढोने के लिए कई लोगों की ज़रूरत रहती थी।

स्रोत-ग

जगह साफ़ क्यों नहीं की जा सकती

आर्थर क्रॉफर्ड को 1865 में बंबई का पहला नगर निगम आयुक्त नियुक्त किया गया था। उन्होंने कई 'खतरनाक पेशों' को दक्षिणी बंबई से बाहर रखने का प्रयास किया। उन्होंने बताया कि किस प्रकार बिल्डर और उद्यमी जगह के मनमाने ढंग से इस्तेमाल के लिए इंस्पेक्टरों को घूस देते हैं, भले ही उनकी गतिविधियों से शहर में प्रदूषण और बढ़ता हो :

'... केशवजी नायक अपने रंगसाज़ों को वापस उनके पुराने क्वार्टरों में ले आया है। मैंने उसे सज़ा भी दी लेकिन कोई सफलता हाथ नहीं लगी। केशवजी नायक ने पानी की तरह पैसा बहाया। जाने-माने डॉक्टरों ने क़सम खाकर कहा कि रँगाई के कड़ाहों से सेहत को फ़ायदा होता है! ... इस घटना को देखकर जर्मनी की एक ताक़तवर कंपनी ने भी प्रभादेवी मंदिर के पास भाप से रँगाई की एक विशाल कंपनी खोल दी है। उसका गंदा पानी माहीम खाड़ी के पानी और मिट्टी को गंदा करता है।... हद तो यह है कि भैयों, दासों, शेनवी ब्राह्मणों और तमाम (पारसियों) ने जहाँ मन किया वहाँ कपड़ा और धागा कारखाने खोल दिए हैं। मसलन, बायकुला क्लब के पास, रेसकोर्स पर, कमाठीपुरा फोरास रोड पर, खेतवाड़ी में, गिरगाँव रोड पर और चौपाटी पर।'

इस तरह के बयानों को पढ़ते हुए हमें ध्यान रखना चाहिए कि औपनिवेशिक अफ़सर अंग्रेज़ों को ईमानदार और हिंदुस्तानियों को भ्रष्ट, अंग्रेज़ों को प्रदूषण व पर्यावरण की फ़िक्र करने वाला और हिंदुस्तानियों को ऐसे मुद्दों के बारे में बेपरवाह दिखाते थे।

स्रोत

© NCERT not to be republished

घर के भीतर जगह की कमी के कारण खाना पकाने, कपड़े धोने और सोने आदि के लिए सड़कों और पास-पड़ोस के खाली स्थानों का भी इस्तेमाल किया जाता था। जहाँ खाली जगह मिलती थी, शराब की दुकानें और अखाड़े खुल जाते थे। सड़कों का प्रयोग विभिन्न प्रकार की मनोरंजन संबंधी गतिविधियों के लिए भी किया जाता था। बीसवीं शताब्दी के शुरुआती दिनों को याद करते हुए पार्वतीबाई भोर ने बताया : 'हमारी चार चॉलों के बीच एक खुला मैदान था। वहाँ कभी बाज़ीगर, कभी मदारी तो कभी कलाबाज़ अपने करतब दिखाने आते रहते थे। वहीं नंदी बैल को देखने के लिए मजमा जुटता था। मैं कड़कलक्ष्मी से बहुत डरती थी। जब वह दो रोटी के लिए खुद अपने बदन पर कोड़े बरसाती थी तो मेरी रूह काँप जाती थी।' चॉलों में ही रोज़गार, हड़तालों, दंगे और प्रदर्शनों के बारे में खबरों के लेन-देन का भी काम चलता था।

चित्र 21 - बीसवीं सदी की शुरुआत में कलबादेवी रोड के पास बनाई गई चॉल।
इस इमारत में जगह का संयोजन किस प्रकार किया गया है?

मिलों के आसपास की बस्तियों में जाति-कुटुंब के मुखिया गाँव प्रधान जैसी हैसियत रखते थे। कई बार मिल-मज़दूरों का ठेकेदार ही मोहल्ले का नेता भी होता था। वह विवादों का फ़ैसला करता था, खाने-पीने का इंतज़ाम करता था और वक़्त ज़रूरत क़र्ज़ आदि की भी व्यवस्था करता था। राजनीतिक हालात के बारे में भी वह महत्वपूर्ण जानकारियाँ लाता था।

'दबे-कुचले वर्गों' के लोगों के लिए तो मकान का इंतज़ाम करना और भी मुश्किल था। बहुत सारी चॉलों में मुसलमानों और निचली जाति के लोगों को नहीं रखा जाता था। उन्हें अकसर नालीदार चादर या पत्तों या बाँस के बने झोंपड़ों में रहना पड़ता था।

गतिविधि

कल्पना कीजिए कि आप चॉल में रहने वाले युवा हैं। वहाँ के अपने जीवन के एक दिन का वर्णन कीजिए।

अगर लंदन में नगर योजना का काम सामाजिक क्रांति के भय से शुरू किया गया था तो बंबई में यह काम प्लेग की महामारी के डर से हाथों में लिया गया। 1898 में सिटी ऑफ़ बॉम्बे इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट की स्थापना की गई और उसे शहर के बीचोबीच बसे ग़रीबों के मकानों को हटाने का काम सौंपा गया। इस ट्रस्ट की योजनाओं के कारण 64,000 लोगों को आवासीय सुविधाओं से हाथ धोना पड़ा। उनमें से केवल 14,000 लोगों को ही मकान दिए गए। 1918 में भाड़ों को तर्कसंगत सीमा में रखने के लिए किराया कानून पारित किया गया लेकिन इसका उलटा असर हुआ। किरायों पर अंकुश लगने के कारण मकान मालिकों ने मकान किराए पर देना कम कर दिया जिसके कारण मकानों की भारी क़िल्लत पैदा हो गई।

ज़मीन की कमी के करण शहर के विस्तार से बंबई में हमेशा ही समस्या पैदा हुई। बंबई शहर जिस तरह विकसित हुआ है उसमें **भूमि विकास** परियोजनाओं का अहम हाथ रहा है।

नए शब्द

दबे-कुचले वर्ग : ऐसे लोगों के लिए इस्तेमाल होने वाला शब्द जिन्हें जाति व्यवस्था में 'निम्न जाति' और 'अछूत' माना जाता है।

भूमि विकास : दलदली अथवा डूबी हुई ज़मीन को रहने या खेती करने या किसी अन्य काम के लायक बनाना।

4.4 बंबई में भूमि विकास

क्या आप जानते हैं कि बंबई जिन सात टापुओं को मिला कर बनाया गया है उन्हें लंबे समय में एक-दूसरे से जोड़ा गया था? इस दिशा में सबसे पहली

© NCERT not to be republished

परियोजना 1784 में शुरू की गई थी। बंबई के गवर्नर विलियम हॉर्नबी ने उस समय विशाल तटीय दीवार बनाने के प्रस्ताव पर मंज़ूरी दी ताकि शहर के निचले इलाक़े समुद्र के पानी की चपेट में आने से बच जाएँ।

तब से कई भूमि विकास परियोजनाएँ चलाई जा चुकी हैं। उन्नीसवीं सदी के मध्य में व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए और ज़्यादा ज़मीन की ज़रूरत पैदा हुई तो सरकार और निजी कंपनियों, दोनों की ओर से कई नयी योजनाएँ तैयार की गई ताकि और ज़्यादा समुद्री भूमि को इस्तेमाल के योग्य बनाया जा सके। निजी कंपनियाँ भी जोखिम उठाने के लिए तैयार थीं। 1864 में मालाबार हिल से कोलाबा के आखिरी छोर तक के पश्चिमी तट को विकसित करने का ठेका बैक बे रिक्लेमेशन कंपनी को मिला। भूमि विकास के लिए अकसर बंबई के आसपास के पहाड़ी इलाक़ों को भी सपाट किया जाता था। भारी लागत के कारण 1870 तक ज़्यादातर निजी कंपनियाँ बंद हो चुकी थीं लेकिन तब तक शहर का क्षेत्रफल 22 वर्ग किलोमीटर तक पहुँच चुका था। बीसवीं सदी में जिस प्रकार आबादी तेज़ी से बढ़ती रही, ज़मीन के हर टुकड़े को घेर लिया गया और ज़्यादा से ज़्यादा समुद्री ज़मीन को विकसित किया जाने लगा।

चित्र 22 – कोलाबा कॉज़वे, उन्नीसवीं सदी के अंत में।
यहाँ ट्रामों को घोड़े खींच रहे हैं। बाएँ किनारे पर आप घोड़ों के अस्तबल और पृष्ठभूमि में ट्राम कंपनी दफ़्तरों को देख सकते हैं।

एक सफल भूमि विकास परियोजना बॉम्बे पोर्ट ट्रस्ट के अंतर्गत शुरू की गई। ट्रस्ट ने 1914 से 1918 के बीच एक सूखी गोदी का निर्माण किया और उसकी खुदाई से जो मिट्टी निकली उसका इस्तेमाल करके 22 एकड़ का बालार्ड एस्टेट बना डाला। इसके बाद बंबई का मशहूर मरीन ड्राइव बनाया गया।

चित्र 23 – मरीन ड्राइव।
बंबई का यह प्रसिद्ध स्थान बीसवीं सदी में समुद्री ज़मीन को विकसित करके बनाया गया था।

4.5 सपनों का शहर बंबई : सिनेमा और संस्कृति की दुनिया

भला कौन होगा जो बंबई का जिक्र करे पर उसके फ़िल्म उद्योग की चर्चा न करे? यहाँ की बेहिसाब भीड़ और कठिन जीवनस्थितियों के बावजूद बहुतों के लिए बंबई 'मायापुरी' ही है – रूपहले सपनों का शहर।

बंबई की बहुत सारी फ़िल्में शहर में आने वाले आप्रवासियों और उनके दैनिक जीवन में पेश आने वाली मुश्किलों के बारे में ही हैं। बंबई फ़िल्म उद्योग के कई लोकप्रिय गीत शहर के अंतर्विरोधी आयामों को उजागर करते हैं। फिल्म *सीआईडी* (1956) में नायक का दोस्त गाता है, *'ऐ दिल है मुश्किल जीना यहाँ, ज़रा हटके, ज़रा बचके, ये है बॉम्बे मेरी जान।'* फ़िल्म *गेस्ट हाउस* (1959) में मोहभंग की आवाज़ सुनाई देती है, *'जिसका जूता, उसी के सर, दिल है छोटा बड़ा शहर, अरे वाह रे वाह तेरी बंबई।'*

© NCERT not to be republished

बंबई फ़िल्म उद्योग सबसे पहले कब सामने आया? हरीशचंद्र सखाराम भाटवाडेकर ने 1896 में बंबई के हैंगिंग गार्डंस में हुए कुश्ती के एक मुक़ाबले के एक दृश्य को कैमरे में उतारा था। यही भारत की पहली मूवी यानी चलचित्र था। कुछ समय बाद दादा साहेब फाल्के ने *राजा हरिशचंद्र* (1913) फ़िल्म बनाई। इसके बाद तो बंबई का फ़िल्म उद्योग आगे ही बढ़ता गया। 1925 तक बंबई भारत की फ़िल्म राजधानी बन चुका था। वहाँ पूरे देश के दर्शकों के लिए फ़िल्मों का निर्माण होता था। 1947 में लगभग 50 फ़िल्में बनीं जिन पर 75.6 करोड़ रुपए की लागत आई थी। 1987 तक आते-आते फ़िल्म उद्योग में काम करने वालों की संख्या 5,20,000 तक जा चुकी थी।

फ़िल्म उद्योग में काम करने वाले भी ज़्यादातर लाहौर, कलकत्ता, मद्रास आदि दूसरे शहरों से आए थे। इतनी सारी जगहों से आए लोगों के कारण ही फ़िल्म उद्योग का ऐसा राष्ट्रीय स्वरूप बना था। लाहौर से आए लोगों ने हिंदी फ़िल्म उद्योग के विकास में काफ़ी महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। इस्मत चुग़ताई और साअदत हसन मंटो जैसे बहुत सारे विख्यात कलाकार और लेखक हिंदी सिनेमा से जुड़े हुए थे।

खुद बंबइया फ़िल्मों ने भी शहर को सपने और हक़ीक़त, झोपड़पट्टी और दमकते बंगलों की दुनिया वाली मिली-जुली छवि देने में अहम भूमिका अदा की है।

चर्चा करें

स्रोत-घ को पढ़ें। यह कविता नयी पीढ़ी के लिए अवसरों और अनुभवों के बारे में क्या कहती है?

स्रोत-घ

स्रोत

बंबई के कई चेहरे

मेरे पिता सहयाद्रि से आए थे
तुम्हारी चौखट पर खड़े हो गए थे
उनके कंधे पर था एक कंबल
और देह में खालिस श्रम लिए

टिफ़िन बॉक्स लादे हुए
मिल तक जाता था मैं
बचपन से मैं ऐसे ही बना था
जैसे लुहार हथौड़ी बनाए
मैंने करघे पर ही जीवन कातना सीखा
और कभी-कभी हड़ताल पर जाना भी

मेरे बाप मज़दूरी करते-करते ढल गए
मैं भी ढलूँगा, फिर मेरे बच्चे
उन्हें भी मिलेंगी ऐसी ही उदास रातें
स्याह कुंडली में लिपटे अँधेरे ...

नारायण सुर्वे द्वारा लिखित *माज़े विद्यापीठ* (1975) के अंश

इस कविता की पंक्तियाँ फ़िल्मों की चकाचौंध भरी दुनिया के बिलकुल विपरीत दिखाई पड़ती हैं। ये पंक्तियाँ शहर में नवागंतुकों के अथक परिश्रम और कठिनाइयों की ओर संकेत करती हैं।

© NCERT not to be republished

बॉक्स 2

एशियाई देशों के सभी शहर अनियोजित और बेतरतीब ढंग से विकसित नहीं हुए। बहुत सारे शहरों की सोच-विचार कर योजना तैयार की गई थी। आधुनिक सिंगापुर ऐसा ही एक शहर था।

ली कुआन येव का सिंगापुर

आज हम सबके लिए सिंगापुर एक कामयाब, अमीर, और सुनियोजित शहर है। दुनिया भर के लिए नगर विकास का एक शानदार मॉडल। पर, इस शहर को यह हैसियत हाल ही में मिली है। 1965 तक सिंगापुर एक महत्वपूर्ण बंदरगाह तो था लेकिन वह बाक़ी एशियाई शहरों जैसा ही था। नियोजन का तत्व तो यहाँ 1822 से ही मौजूद था लेकिन लंबे समय तक केवल श्वेत बस्तियों को ही योजना के हिसाब से बसाया जाता था। सिंगापुर पर उस समय श्वेतों का ही शासन था। शहर की ज़्यादातर आबादी भीड़-भाड़, गंदगी, खराब मकानों और ग़रीबी के माहौल में रहती थी।

1965 में जब पीपुल्स एक्शन पार्टी के अध्यक्ष ली कुआन येव के नेतृत्व में सिंगापुर को आज़ादी मिली तो यह एक स्वतंत्र राष्ट्र बन गया। इसके बाद एक विशाल आवास एवं विकास कार्यक्रम शुरू किया गया जिसने इस द्वीप राष्ट्र का चेहरा ही बदल डाला। इस बारे में जो योजना तैयार की गई थी उसमें शहर के एक-एक इंच का हिसाब रखा गया था। सरकार ने लगभग 85 फ़ीसदी जनता को अच्छे मकान दे दिए थे इसलिए सरकार को जनता का समर्थन भी हासिल था। ऊँचे-ऊँचे आवासीय खंडों में हवा-निकासी और सभी प्रकार की सेवाओं का इंतज़ाम किया गया था। ये चीज़ें अच्छी भौतिक योजना का सबूत थीं। इन इमारतों ने शहर के सामाजिक जीवन को भी बदल दिया था। बाहरी गलियारों के कारण अपराध कम हो गए थे, बड़े-बूढ़ों को भी उनके परिवारों के साथ बसा दिया गया था, सामुदायिक कार्यक्रमों के लिए सभी इमारतों में खाली मंज़िलें छोड़ दी गयी थीं।

शहर में लोगों के आने पर नियंत्रण रखा जाने लगा। चीनी, मलय और भारतीय, इन तीनों समुदायों के बीच नस्ली सामाजिक टकरावों को रोकने के लिए सामाजिक संबंधों पर भी लगातार नज़र रखी जाने लगी थी। अखबारों, पत्रिकाओं और सभी प्रकार के संचार साधनों पर कड़ा नियंत्रण रखा जाता था।

1986 में राष्ट्रीय दिवस के अपने भाषण में ली कुआन येव ने नियोजन के शुरुआती दिनों को याद करते हुए कहा, '...अगर हमने निहायत निजी मामलों में भी दखल न दिया होता तो हम तरक्की नहीं कर सकते थे : आपके पड़ोस में कौन रहता है, आप कैसे जीते हैं, आप शोर तो नहीं मचाते, आप कहाँ-कैसे थूकते हैं, कैसी भाषा का इस्तेमाल करते हैं। हम ही तय करते थे कि क्या सही है। लोग क्या सोचते हैं इसकी हमें परवाह नहीं थी।' द *स्ट्रेट्स टाइम्स* में उद्धृत।

हालाँकि सिंगापुर के नागरिकों को भौतिक सुविधाएँ और संपन्नता मिली हुई है लेकिन बहुत सारे लोगों का मानना है कि इस शहर में जीवंत और चुनौतीपूर्ण राजनीतिक संस्कृति अभी भी नहीं है।

चित्र 24 - समुद्री ज़मीन को विकसित करके बनाया गया सिंगापुर मरीना।

गतिविधि

बैरॉन हॉसमान और लगभग सौ साल बाद ली कुआन येव द्वारा सिंगापुर में किए गए कामों की तुलना कीजिए। इस बारे में चर्चा कीजिए कि क्या शहर में भौतिक सुख-सुविधा और सुंदरता पैदा करने के लिए सामाजिक और निजी जीवन पर नियंत्रण रखना ज़रूरी है। क्या आपको लगता है कि सरकार को इस बारे में नियम बनाने का अधिकार दे दिया जाना चाहिए कि लोग अपना निजी जीवन कैसे जीते हैं?

© NCERT not to be republished

5 शहर और पर्यावरण की चुनौती

जहाँ भी शहर फैले हैं, पारिस्थितिकी और पर्यावरण को नुकसान पहुँचा है। कारखानों, मकानों और अन्य संस्थानों के लिए ज़मीन की ज़रूरत को पूरा करने के वास्ते प्राकृतिक आयामों को काट–छाँट कर समतल किया गया है। शहरों में पैदा होने वाले बेहिसाब कचरे और गंदगी से पानी और हवा प्रदूषित हुई है जबकि शहरी बाशिंदों को दिन–रात भारी शोर में जीना पड़ता है, सो अलग।

उन्नीसवीं शताब्दी के इंग्लैंड के घरों और कारखानों में कोयले के बड़े पैमाने पर इस्तेमाल से गंभीर समस्याएँ पैदा हो गई थीं। लीड्स, ब्रैडफोर्ड और मैनचेस्टर जैसे औद्योगिक शहरों में कारखानों की सैकड़ों चिमनियाँ बेहिसाब काला धुआँ फेंकती रहती थीं। लोग मज़ाक में कहने लगे थे कि थोड़े दिन बाद इन शहरों के लोग यही मानने लगेंगे कि आसमान मटमैला होता है और पेड़–पौधे काले होते हैं! दुकानदार, मकानमालिक और तमाम लोग इस बात से परेशान रहने लगे थे कि उनके शहरों पर स्याह कोहरा छाया रहता है जिससे लोगों को जल्दी गुस्सा आ जाता है, धुएँ से जुड़ी बीमारियाँ फैलती हैं और कपड़े सदा गंदे रहते हैं।

जब लोगों ने पहली बार साफ़ हवा के लिए मुहिम छेड़ी तो सबसे पहले इस समस्या से निपटने के लिए क़ानूनी रास्तों को आज़माने का प्रयास किया गया। यह काम आसान नहीं था क्योंकि कारखानों और भाप इंजनों के मालिक

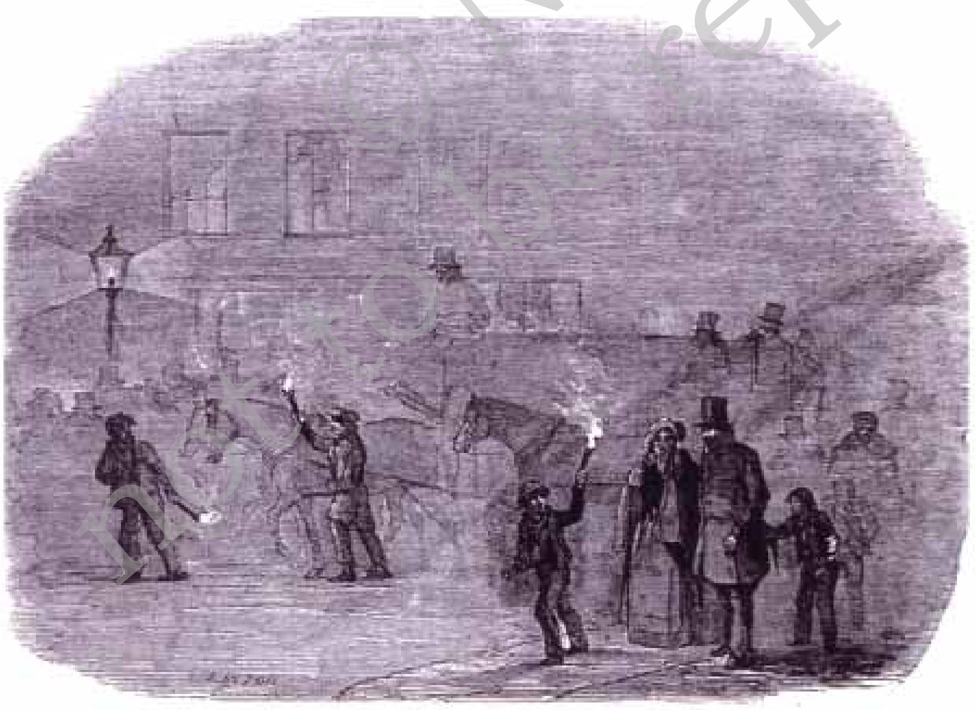

चित्र 25 – लंदन का धुँआ-युक्त कोहरा, दि इलस्ट्रेटेड लंदन न्यूज़, 1847
पूरा लंदन शहर कारखानों और घरों में जलने वाले कोयले से निकलने वाले धुएँ से अटा हुआ था। इसके कारण वहाँ साँस लेना या सड़कों को साफ़-साफ़ देख पाना भी मुश्किल हो जाता था।

© NCERT not to be republished

अपनी मशीनों में सुधार के लिए पैसा खर्च करने को क़तई तैयार नहीं थे। 1840 के दशक तक डर्बी, लीड्स और मैनचेस्टर जैसे कुछ शहरों में धुएँ पर क़ाबू पाने के लिए क़ानून बनाए जा चुके थे। लेकिन धुएँ को मापना या उस पर कड़ी नज़र रखना बहुत मुश्किल था। कारखाना मालिकों ने अपनी मशीनों में मामूली फेरबदल ही किए जिससे धुएँ की तादाद पर कोई फ़र्क़ पड़ने वाला नहीं था। 1847 और 1853 के धुआँ नियंत्रण क़ानून अपने मक़सद में नाकाम हो चुके थे।

कलकत्ता का भी वायु प्रदूषण का पुराना इतिहास रहा है। यहाँ के लोग बारहों महीने धुएँ भरी मटमैली हवा में साँस लेते थे। जाड़ों में तो समस्या और गंभीर हो जाती थी। क्योंकि कलकत्ता दलदली ज़मीन पर बसा था इसलिए वहाँ ज़्यादा कोहरा पैदा होता था जो धुएँ के साथ मिलकर काली धुंध पैदा कर देता था। शहर में भारी वायु प्रदूषण के पीछे इस बात का काफ़ी हाथ था कि वहाँ बहुत बड़ी आबादी गोबर के उपलों और लकड़ी के ईंधन पर ही आश्रित थी। परंतु प्रदूषण का इससे भी बड़ा स्रोत तो वे कारखाने और प्रतिष्ठान थे जिनमें कोयले से चलने वाले वाष्प इंजनों का इस्तेमाल किया जाता था।

औपनिवेशिक अधिकारियों ने शुरू-शुरू में दुर्गंध पैदा करने वाले स्थानों की सफ़ाई का इरादा बनाया लेकिन 1855 में शुरू हुई रेलवे लाइन ने तो एक और खतरनाक प्रदूषक तत्व – रानीगंज से आने वाला कोयला – भी सामने ला दिया। भारतीय कोयले में राख ज़्यादा निकलती है जिसकी वजह से यह समस्या वैसे भी गंभीर दिखाई देती थी। गंदे कारखानों को शहर से बाहर निकाल फेंकने के लिए कई याचिकाएँ दी गईं लेकिन उनका कोई नतीजा नहीं निकला। फिर भी, कलकत्ता भारत का पहला शहर था जहाँ 1863 में धुआँ निरोधक क़ानून पारित किया गया था।

1920 में टॉलीगंज की चावल मिलों में कोयले की बजाय धान की भूसी जलाई जाने लगी जिसके कारण आसपास के लोगों ने शिकायत की कि, 'हवा में कालिख भरी रहती है जो सुबह से शाम तक बरसती रहती है, और यहाँ रहना तो नामुमकिन है।' बंगाल स्मोक नुइसेंस कमीशन (बंगाल धुआँ निरोधक आयोग) के निरीक्षकों ने आखिरकार औद्योगिक धुएँ पर क़ाबू पा लिया। लेकिन घरेलू धुएँ पर लगाम कसना अभी भी मुश्किल था।

गतिविधि

बंगाल स्मोक नुइसेंस कमीशन की ओर से एक कारखाने के मालिक को भेजने के लिए नोटिस तैयार कीजिए। नोटिस में उसे कारखाने से निकलने वाले धुएँ के खतरों और हानिकारक प्रभावों के बारे में बताइए।

निष्कर्ष

तमाम समस्याओं के बावजूद शहर ऐसे लोगों को हमेशा आकर्षित करते रहे हैं जो आज़ादी और नए मौक़ों की चाह रखते हैं। यहाँ तक कि दुर्गाचरण के उपन्यास में जिसका ज़िक्र अध्याय के शुरू में हुआ था, देवताओं को भी अपना स्वर्ग अधूरा-सा लगने लगता है। कलकत्ता की अपनी सैर में उन्होंने जो कुछ देखा और अनुभव किया था वह उन्हें अपने स्वर्ग में भी नहीं दिखाई देता था। उपन्यास के देवताओं को शहरी जीवन के जिन आयामों के बारे में सबसे ज़्यादा बेचैनी थी वे उन लाखों लोगों के लिए सामाजिक और आर्थिक गतिशीलता के नए झरोखों की निशानी थे जिन्होंने शहरों को ही अपना घर बना लिया था।

© NCERT not to be republished

संक्षेप में लिखें

1. अठारहवीं सदी के मध्य से लंदन की आबादी क्यों फैलने लगी? कारण बताइए।
2. उन्नीसवीं और बीसवीं सदी के बीच लंदन में औरतों के लिए उपलब्ध कामों में किस तरह के बदलाव आए? ये बदलाव किन कारणों से आए?
3. विशाल शहरी आबादी के होने से निम्नलिखित पर क्या असर पड़ता है? ऐतिहासिक उदाहरणों के साथ समझाइए।

   (क) ज़मींदार

   (ख) क़ानून-व्यवस्था सँभालने वाला पुलिस अधीक्षक

   (ग) राजनीतिक दल का नेता
4. निम्नलिखित की व्याख्या करें –

   (क) उन्नीसवीं सदी में धनी लंदनवासियों ने ग़रीबों के लिए मकान बनाने की ज़रूरत का समर्थन क्यों किया?

   (ख) बंबई की बहुत सारी फ़िल्में शहर में बाहर से आने वालों की ज़िंदगी पर आधारित क्यों होती थीं?

   (ग) उन्नीसवीं सदी के मध्य में बंबई की आबादी में भारी वृद्धि क्यों हुई?

संक्षेप में लिखें

चर्चा करें

1. लोगों को मनोरंजन के अवसर उपलब्ध करने के लिए इंग्लैंड में उन्नीसवीं सदी में मनोरंजन के कौन-कौन से साधन सामने आए।
2. लंदन में आए उन सामाजिक परिवर्तनों की व्याख्या करें जिनके कारण भूमिगत रेलवे की ज़रूरत पैदा हुई। भूमिगत रेलवे के निर्माण की आलोचना क्यों हुई?
3. पेरिस के हॉसमानीकरण का क्या अर्थ है। इस तरह के विकास को आप किस हद तक सही या ग़लत मानते हैं? इस बात का समर्थन या विरोध करते हुए अख़बार के संपादक को पत्र लिखिए और उसमें अपने दृष्टिकोण के पक्ष में कारण दीजिए।
4. सरकारी नियमन और नए क़ानूनों ने प्रदूषण की समस्या को किस हद तक हल किया? निम्नलिखित के स्तर में परिवर्तन के लिए बने क़ानूनों की सफलता और विफलता का एक-एक उदाहरण दीजिए –

   (क) सार्वजनिक जीवन

   (ख) निजी जीवन

चर्चा करें

परियोजना कार्य

इस अध्याय में जिन बंबइया फ़िल्मों का उल्लेख किया गया है उनमें से कोई एक फ़िल्म देखिए। अब इस अध्याय में उल्लिखित एक फ़िल्म और बंबई पर आधारित किसी हालिया फ़िल्म में शहर को किस तरह दिखाया गया है, इसकी तुलना कीजिए।

परियोजना कार्य

© NCERT not to be republished